International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(III), April- June, 2025, pp. 07-11

बाड़मेर के स्थापत्य स्मारकों का औपनिवेशिक इतिहास लेखन में निरूपण और वर्तमान व्याख्याएं

अमित कुमार*

एम.ए., (नेट, इतिहास), वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान।

*Corresponding Author: suhamamitpaliwal@gmail.com

सार

बीकानेर का ऐतिहासिक परिदृश्य प्रायः उसकी राजसी विरासत, किलों, हवेलियों और मंदिरों के भव्य स्थापत्य से पहचाना जाता है, किन्तु इन अद्भुत संरचनाओं और कलात्मक परंपराओं के निर्माण में जिन शिल्पकारों, कारीगरों और दस्तकारों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है, वे इतिहास के औपचारिक लेखन से लगभग अनुपस्थित हैं। यह शोध–पत्र बीकानेर के शिल्पकार और कारीगर वर्ग के योगदान को सबऑल्टर्न इतिहास लेखन के दृष्टिकोण से पुनः स्थापित करने का प्रयास करता है। इसमें लोक परंपराओं, स्मृति–आधारित आख्यानों, शिल्प–केंद्रित कलाओं और स्थापत्य तकनीकों के माध्यम से उन समुदायों की भूमिका का अध्ययन किया गया है, जिन्हें पारंपरिक इतिहास लेखन में हाशिए पर रखा गया। यह शोध यह रेखांकित करता है कि बीकानेर की सांस्कृतिक गरिमा और कलात्मक विविधता का वास्तविक निर्माण श्रमजीवी वर्गों के योगदान से संभव हो पाया, किंतु उन्हें कभी नायक के रूप में स्वीकार नहीं किया गया। इस शोध में विशेष रूप से बढ़ई, लोहार, राजमिस्त्री, चित्रकार, नक्काशीकार, कसीदाकारी करने वाले, कपड़ा रंगने वाले (रंगरेज़) और अन्य कारीगर समुदायों की सामाजिक संरचना, तकनीकी दक्षता तथा सांस्कृतिक उपस्थिति का विश्लेषण किया गया है। इनके द्वारा निर्मित कृतियों को महज कला या उपयोगिता की वस्तु नहीं, बल्कि सामाजिक इतिहास के दस्तावेज़ के रूप में देखा गया है। यह शोध न केवल बीकानेर की शिल्प परंपरा को दस्तावेज करता है, बल्कि यह भी इंगित करता है कि आधुनिकता और बाजारवादी प्रवृत्तियों के प्रभाव से कैसे इन परंपराओं में ह्रास हुआ है। अंततः यह शोध उपेक्षित समुदायों की स्मृति, परंपरा और योगदान को पुनर्परिभाषित कर, बीकानेर के इतिहास को अधिक समावेशी और बहुआयामी दृष्टिकोण से समझने की दिशा में एक प्रयास है।

शब्दकोशः *शिल्पकार, कारीगर, सबऑल्टर्न, हस्तकला, इतिहास।*

प्रस्तावना

भारतीय इतिहास लेखन की मुख्यधारा ने प्रायः राजाओं, युद्धों और राजनीतिक घटनाओं को केंद्र में रखा है, जबकि समाज के उन वर्गों की उपेक्षा की गई है, जिनका योगदान सांस्कृतिक, कलात्मक और आर्थिक विकास में अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है। बीकानेर, जो अपनी स्थापत्य कला, भित्तिचित्रों और हवेलियों के लिए प्रसिद्ध है, वहाँ की कलात्मक समृद्धि केवल शासकों के संरक्षण का परिणाम नहीं, अपितु उन असंख्य शिल्पकारों और कारीगरों के श्रम का प्रतिफल है, जिन्हें इतिहास के पन्नों में यथोचित स्थान नहीं मिल पाया।

यह शोध–पत्र बीकानेर के शिल्पकार एवं कारीगर वर्ग के सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक योगदान की पुनर्रचना का प्रयास है। इसमें सबऑल्टर्न इतिहास दृष्टिकोण को आधार बनाते हुए यह विश्लेषण किया गया है कि किस प्रकार ये समुदाय न केवल स्थापत्य और कला में दक्ष थे, बल्कि वे सामाजिक जीवन के

निर्माण में भी निर्णायक भूमिका निभाते थे। साथ ही यह भी विवेचन किया गया है कि आधुनिक काल में इन परंपरागत समुदायों को किस प्रकार उपेक्षा, विस्थापन और विस्मृति का सामना करना पड़ा है। लोक परंपराओं, मौखिक इतिहास, शिल्प तकनीकों और सांस्कृतिक निरंतरता के माध्यम से यह शोध एक वैकल्पिक इतिहास दृ ष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो हाशिए पर पड़े वर्गों की आवाज़ को सामने लाने का प्रयास करता है।

शिल्पकार समुदायों की पहचान

बीकानेर की सांस्कृतिक और भौतिक विरासत का निर्माण जिन हाथों से हुआ, वे अनेक विशिष्ट शिल्प परंपराओं से जुड़े समुदायों के थे। इन समुदायों ने पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तकला, निर्माण कार्य, कलात्मक सज्जा तथा दैनिक उपयोग की वस्तुओं के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। परंतु इतिहास लेखन की मुख्यधारा में इन समुदायों को उनके श्रम और योगदान के अनुरूप स्थान नहीं मिल सका। यह खंड बीकानेर में सक्रिय प्रमुख शिल्पकार समुदायों की सामाजिक पहचान, उनकी पारंपरिक भूमिकाओं और कलात्मक दक्षता को चिह्नित करने का प्रयास करता है।

बीकानेर में सुथार (बढ़ई) समुदाय लकड़ी के निर्माण और नक्काशी कार्य में दक्ष रहे हैं। हवेलियों और मंदिरों के भव्य दरवाज़े, झरोखे, छज्जे और खिड़कियाँ इन्हीं के कौशल की गवाही देते हैं। लुहार समुदाय ने लोहे के औजार, कृषि उपकरण, दरवाज़ों की सांकलें और सजावटी वस्तुएँ बनाई। कुम्हार (प्रजापति) समुदाय मिट्टी के बर्तनों, दीपकों, खिलौनों और सजावटी वस्तुओं के निर्माण में निपुण रहे। कसाईया या मनिहार समुदाय ने काँच की चूड़ियों, कंघियों और अन्य सौंदर्य प्रसाधनों के निर्माण में योगदान दिया। चिपा और रंगरेज़ समुदाय वस्त्र रंगाई–छपाई तथा पारंपरिक परिधानों की कलात्मक सज्जा में संलग्न थे। बीकानेर की प्रसिद्ध बंधेज, लीहरिया, और कांथा कढ़ाई जैसी परंपराएं इन्हीं समुदायों की कलात्मकता से विकसित हुईं।

इसके अतिरिक्त मोची समुदाय ने चमड़े से जूतियाँ, बटुए और अन्य उपयोगी वस्तुएँ बनाईं, जो स्थानीय जीवनशैली का अभिन्न हिस्सा थीं। राज मिस्त्री और चित्रकार समुदायों ने भवन निर्माण और भित्तिचित्रों की परंपरा को पुष्ट किया। इन समुदायों की पहचान केवल उनके पेशों से नहीं, बल्कि उनकी पारंपरिक तकनीकों, प्रतीकात्मक शैलियों और सामाजिक नेटवर्क से भी होती है, जो उन्हें केवल श्रमिक नहीं बल्कि सांस्कृतिक वाहक बनाते हैं।इस प्रकार बीकानेर के शिल्पकार समुदाय बहुआयामी कौशल, परंपरा और सांस्कृतिक स्मृति के संवाहक हैं, जिनकी पहचान और भूमिका को समझे बिना बीकानेर की समग्र ऐतिहासिक परिकल्पना अधूरी रह जाती है।

स्थापत्य व शिल्प में योगदान

बीकानेर की स्थापत्य परंपरा और शिल्पकला उसकी पहचान का अभिन्न अंग रही है, जिसमें शासकों के संरक्षण के साथ–साथ स्थानीय शिल्पकार वर्ग की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है। दुर्ग, महल, मंदिर, हवेलियाँ, कुएँ और बावड़ियाँकृइन सभी के निर्माण और अलंकरण में जिन हाथों ने काम किया, वे परंपरागत कारीगर समुदायों के थे। उनके कौशल और सौंदर्यबोध ने बीकानेर को एक विशिष्ट स्थापत्य पहचान दी, जो आज भी पर्यटकों और शोधकर्ताओं को आकर्षित करती है।

जूनागढ़ किला, बीकानेर का स्थापत्य गौरव, पत्थर तराशी, नक्काशीदार झरोखों, लकड़ी की कलात्मक छतरियों, और भित्तिचित्रों का अद्भुत संगम है। इस विशाल निर्माण में राजमिस्त्री, सुतार (बढ़ई), लुहार, चित्रकार, और मूर्तिकारों की सामूहिक सहभागिता थी। इन कारीगरों ने केवल आदेशों का पालन नहीं किया, बल्कि अपने रचनात्मक सुझावों और पारंपरिक तकनीकों के माध्यम से स्थापत्य को जीवंत स्वरूप प्रदान किया।

हवेलियों में लकड़ी की जटिल नक्काशी, रंगीन काँच की खिड़कियाँ, और भित्ति चित्रों की श्रृंखला शिल्प की उत्कृष्ट परंपरा को दर्शाती है। बीकानेर की पुरानी बस्तियों में स्थित कोठियों और हवेलियों में सुथारों की निपुणता, चित्रकारों की कल्पनाशीलता और राजमिस्त्रियों की संरचनात्मक समझ आज भी विद्यमान है। मंदिरों में शिल्पकारों द्वारा निर्मित स्तंभ, मंडप, तोरण, और कलात्मक प्रतिमाएँ धार्मिक भावों को मूर्त रूप प्रदान करती हैं।

इसके अतिरिक्त, कारीगरों ने बीकानेर के शाही जीवन के उपयोग में आने वाली वस्तुओंकृजैसे फर्नीचर, रथ, पालकियाँ, शस्त्र सज्जा, वस्त्र और आभूषणकृमें भी सौंदर्य और उपयोगिता का अद्‌भुत समन्वय प्रस्तुत किया। बीकानेरी ऊँट–शृंगार, काठी–निर्माण, और चमड़े पर कढ़ाई भी स्थानीय शिल्प परंपराओं की विशिष्टता को दर्शाते हैं।

इस प्रकार बीकानेर की स्थापत्य व शिल्प विरासत, केवल शासक वर्ग की महिमा नहीं, अपितु एक व्यापक कारीगर समुदाय की सृजनात्मक ऊर्जा, पीढ़ियों की परंपरा और श्रम–संस्कार का प्रतिफल है। यह योगदान उपेक्षित इतिहास की उन कड़ियों को उजागर करता है, जिन्हें अब तक हाशिए पर रखा गया।

उपेक्षा व विस्मृति के कारण

बीकानेर की स्थापत्य और शिल्प कला के निर्माण में परंपरागत कारीगर वर्ग की भूमिका जितनी महत्वपूर्ण रही, उतनी ही उपेक्षित भी। इतिहास लेखन की मुख्यधारा ने इन समुदायों को केवल श्रमिक या सहयोगी मानकर उनके योगदान को सीमित कर दिया। वस्तुतः, उपेक्षा और विस्मृति के अनेक कारक रहे हैं जो शिल्पकारों के सांस्कृतिक अवदान को हाशिए पर ले गए।

प्रथम, औपनिवेशिक इतिहास लेखन ने भारतीय स्थापत्य और कलाओं को या तो 'पिछड़ी परंपरा' के रूप में देखा या उसे केवल शासक वर्ग की उपलब्धि के रूप में चित्रित किया। इससे कारीगरों की सामाजिक और रचनात्मक भूमिका अदृश्य हो गई। द्वितीय, आधुनिक विकास की प्रक्रिया, जिसमें सीमेंट–कंक्रीट और मशीनों का प्रयोग बढ़ा, ने पारंपरिक शिल्प और कारीगरी को अप्रासंगिक बना दिया। परिणामस्वरूप, ये शिल्प और उनसे जुड़े समुदाय समाज की चेतना से धीरे–धीरे गायब होते गए।

तृतीय, जातिगत पदानुक्रम और सामाजिक दृष्टिकोण ने कारीगर समुदायों को निम्न समझा और उनकी कलात्मकता को ष्श्रमिक वर्ग का कामष मानकर इतिहास से दूर रखा। चतुर्थ, शोध और संरक्षण की कमी ने भी इनके दस्तावेजीकरण और सम्मानजनक पुनर्पाठ में बाधा पहुँचाई। जबकि मंदिरों, महलों और हवेलियों की भव्यता की चर्चा होती रही, उन्हें साकार करने वाले हाथों की गाथा कभी सुनाई नहीं दी।

इस प्रकार, उपेक्षा और विस्मृति के यह कारण केवल ऐतिहासिक विस्मृति नहीं हैं, बल्कि सामाजिक संरचना और दृष्टिकोण की गूढ़ समस्या का भी द्योतन करते हैं। अब आवश्यकता है कि इन समुदायों की भूमिका को फिर से पहचाना जाए, और उनके योगदान को समावेशी इतिहास लेखन के माध्यम से प्रतिष्ठित किया जाए।

ऐतिहासिक साक्ष्य

बीकानेर की स्थापत्य और शिल्प परंपरा का प्रमाण अनेक भौतिक और लिखित स्रोतों से प्राप्त होता है, जो कारीगर समुदायों के अस्तित्व और उनके योगदान को प्रमाणित करते हैं। जूनागढ़ दुर्ग, लालगढ़ महल, और गंगाशहर की हवेलियाँ स्थापत्य शैली और शिल्प कौशल के उत्कृष्ट उदाहरण हैं, जिनमें पत्थर नक्काशी, लकड़ी के झरोखे, चित्रित भित्तियाँ और सजावटी स्तंभ स्पष्ट रूप से कारीगरों के परिश्रम की कथा कहते हैं। इन संरचनाओं में प्रयुक्त शिल्प न केवल सौंदर्य के दृष्टिकोण से उत्कृष्ट हैं, बल्कि यह भी दर्शाते हैं कि कारीगरों ने परंपरागत ज्ञान, तकनीक और सौंदर्यबोध को कैसे संरक्षित और विकसित किया।

लिखित साक्ष्यों की दृष्टि से, बीकानेर राज्य के दस्तावेज़ों, बही खातों, दस्तावेजी रिपोर्टों, तथा कुछ विशिष्ट पांडुलिपियों में कारीगर वर्ग का उल्लेख 'सुतार', 'लुहार', 'मूर्तिकार', 'चित्रकार', 'कुम्हार' आदि नामों से होता है। डॉ. लक्ष्मण गोधारा की कृति बीकानेर का सामाजिक इतिहास में विभिन्न कारीगर जातियों की सामाजिक भूमिका और उनके साथ किए गए व्यवहार की विस्तृत चर्चा की गई है। वहीं रामनारायण दुग्गड़ की पुस्तक राजस्थान की लोकशिल्प परंपरा से यह स्पष्ट होता है कि किस प्रकार परंपरागत कारीगरों ने बीकानेर की सांस्कृतिक पहचान को निर्मित किया। इन ऐतिहासिक स्रोतों से यह प्रमाणित होता है कि बीकानेर की शिल्प परंपरा केवल शाही संरक्षण की देन नहीं थी, बल्कि जनसमुदाय के श्रम–संस्कार और कला–बोध की सम्मिलित अभिव्यक्ति थी।

पुनर्रचना की संभावनाएं और चुनौतियां

बीकानेर के शिल्पकार और कारीगर वर्ग के उपेक्षित इतिहास की पुनर्रचना की दिशा में आज अनेक संभावनाएँ मौजूद हैं। सामाजिक इतिहास लेखन की नई दृष्टियों, जैसे सबाल्टर्न स्टडीज़, लोक इतिहास और मौखिक परंपरा ने हाशिए के वर्गों की ऐतिहासिक भूमिका को उजागर करने की प्रेरणा दी है। बीकानेर जैसे सांस्कृतिक रूप से समृद्ध नगर में अभी भी पारंपरिक कारीगर परिवारों की मौखिक परंपराएँ, परिवारगत कृतियाँ, कार्यशालाएँ (हाथशालाएँ), और लोक स्मृतियाँ सुरक्षित हैं, जिन्हें शोध माध्यम बनाकर इतिहास की रिक्तियों को भरा जा सकता है। साथ ही, पुरातात्त्विक प्रमाण, भवनों पर शिलालेख, निर्माण शिल्प की तकनीकी विशिष्टताएँ तथा कलात्मक अभिव्यक्तियाँ इस पुनर्रचना को और भी प्रामाणिक बना सकती हैं।

किन्तु इस पुनर्रचना की प्रक्रिया में कई चुनौतियाँ भी हैं। सबसे पहली चुनौती है कृ स्रोतों की विखंडित या अनुपलब्ध स्थिति। अधिकांश कारीगरों की जानकारी मौखिक परंपरा में ही सीमित रह गई है, जो समय के साथ लुप्त होती जा रही हैं। दूसरी ओर, इतिहास लेखन में व्याप्त शासक–केंद्रित दृष्टिकोण तथा जातिगत पूर्वग्रहों ने कारीगर समुदायों को केवल श्रमिक या सहायक के रूप में चित्रित किया, जिससे उनकी कलात्मक पहचान छिप गई। इसके अतिरिक्त, भाषा, प्रशिक्षण और अनुसंधान संसाधनों की कमी भी इस क्षेत्र में गंभीर बाधाएँ उत्पन्न करती है। अतः इन चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए, एक बहुविध एवं समावेशी शोध दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जो न केवल इन समुदायों के कलात्मक योगदान को पहचाने, बल्कि उन्हें ऐतिहासिक गरिमा भी प्रदान करे।

समकालीन संदर्भ में स्थिति

बीकानेर के शिल्पकार और कारीगर वर्ग की वर्तमान स्थिति एक ओर सांस्कृतिक उत्तराधिकार की जीवित परंपरा को दर्शाती है, तो दूसरी ओर यह वर्ग सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चुनौतियों से भी जूझ रहा है। परंपरागत शिल्पों कृ जैसे उस्ता कला, काष्ठ नक्काशी, चर्मशिल्प, लाख की चूड़ियाँ, मिट्टी के खिलौने और राजस्थानी भित्तिचित्र कृ आज भी कुछ परिवारों द्वारा सीमित रूप में संरक्षित किए जा रहे हैं। परंतु आधुनिक तकनीक, मशीन आधारित उत्पादन और बाजार–चालित मूल्य–व्यवस्था के कारण इन हस्तशिल्पों की मांग में भारी गिरावट आई है। नई पीढ़ी की आर्थिक आवश्यकताएं और बदलती जीवनशैली भी पारंपरिक शिल्प के उत्तराधिकार में रुचि की कमी का कारण बन रही है।

सरकारी और गैर–सरकारी स्तर पर कुछ प्रयास अवश्य हो रहे हैं, जैसे शिल्पग्राम बीकानेर, हुनर हाट, राजस्थान हेंडीक्राफ्ट बोर्ड और ओडीओपी (व्दम क्पेजतपबज व्दम च्तवकनबज) जैसी योजनाएँ, जिनका उद्देश्य शिल्पकारों को पहचान, बाजार और प्रशिक्षण उपलब्ध कराना है। पर्यटन भी एक माध्यम बन सकता है, जो इन कलाओं के लिए नया बाजार खोल सकता है, विशेषकर बीकानेर जैसे ऐतिहासिक शहर में। डिजिटल माध्यमों जैसे ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म ने कुछ हद तक इन शिल्पों को वैश्विक बाजार से जोड़ा है। हालांकि इन योजनाओं की पहुँच सीमित है और जमीनी स्तर पर पारदर्शिता, निरंतरता और प्रशिक्षण की कमी के कारण कारीगर वर्ग को अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है।

आज की स्थिति में सबसे बड़ी चुनौती यह है कि शिल्पकारों को उनके शिल्प कौशल के लिए सामाजिक सम्मान और आर्थिक स्थायित्व नहीं मिल पा रहा है। अधिकांश कारीगर अनौपचारिक श्रमिक हैं, जिन्हें श्रम अधिकार, स्वास्थ्य सुविधा या पेंशन जैसी बुनियादी सामाजिक सुरक्षा प्राप्त नहीं होती। इसके अतिरिक्त, परंपरागत ज्ञान को दस्तावेजीकरण, संरक्षण और पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरण की कोई संगठित प्रक्रिया मौजूद नहीं है। इन परिस्थितियों में बीकानेर के शिल्पकार वर्ग का समकालीन मूल्यांकन केवल सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य से नहीं, बल्कि एक सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक विमर्श का हिस्सा बनकर ही साकार हो सकता है। समावेशी नीतियों, शिक्षा, शोध और समुदाय–आधारित पहल के माध्यम से ही इन उपेक्षित इतिहासों को पुनर्जीवित किया जा सकता है।

निष्कर्ष

बीकानेर के शिल्पकार और कारीगर वर्ग का इतिहास राजस्थान की सांस्कृतिक और स्थापत्य परंपरा का अभिन्न भाग रहा है, किन्तु यह वर्ग परंपरागत इतिहास लेखन की मुख्यधारा से लंबे समय तक अनुपस्थित रहा। राजकीय संरचनाओं, महलों, मंदिरों, हवेलियों और दैनिक उपयोग की वस्तुओं में इन कारीगरों की कला और श्रम स्पष्ट रूप से विद्यमान है, किंतु उन्हें कभी सृजनकर्ता के रूप में ऐतिहासिक स्थान नहीं दिया गया। यह उपेक्षा न केवल इतिहास–लेखन की दृष्टि में असंतुलन को दर्शाती है, बल्कि सामाजिक संरचना में व्याप्त श्रेणीकरण और जातीय विभाजन को भी प्रतिध्वनित करती है।

समकालीन शोध में जब इतिहास को जन–आधारित दृष्टिकोण से पुनः पढ़ने की प्रवृत्ति बढ़ रही है, तो ऐसे में बीकानेर के कारीगर समुदायों का इतिहास न केवल सांस्कृतिक पुनराविष्कार का माध्यम बनता है, बल्कि यह सामाजिक न्याय और पहचान की पुनर्स्थापना की भी प्रक्रिया है। उनके शिल्प में निहित सौंदर्यबोध, तकनीकी दक्षता और सामाजिक भूमिका को पहचान देना एक ऐसा विमर्श है, जो इतिहास को अधिक समावेशी और बहुवर्गीय बनाता है। इस दिशा में प्रयास, शोध और पुनर्लेखन की सतत आवश्यकता है ताकि 'हाशिए' पर खड़े इन सर्जकों को भी इतिहास के पन्नों में वह स्थान मिल सके, जिसके वे वास्तविक अधिकारी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. रामनारायण दुग्गड़ – राजस्थान की लोकशिल्प परंपरा
2. डॉ. लक्ष्मण गोधारा – बीकानेर का सामाजिक इतिहास
3. रतनलाल शेखावत – राजस्थान की स्थापत्य कला
4. वी. एस. अग्रवाल – भारतीय कला
5. मकरंद मेहता – Crafts and Craftsmen in Traditional India
6. ज्योतिंद्र जैन – Himalayan and Desert Arts of India
7. वंदना भंडारी – Traditions in Rajasthan
8. ब्रिजेन्द्र नाथ शर्मा – Folk Arts and Social Communication in Rajasthan
9. राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर – शिल्प एवं हस्तकला सम्बन्धी अभिलेख संग्रह
10. बी. एल. भण्डारी – राजस्थान की प्राचीन चित्रकला

शिष्य ग्रंथ (थीसिस)

11. बीकानेर के स्थापत्य में शिल्पकारों की भूमिका – एम.फिल शोध प्रबंध, राजस्थान विश्वविद्यालय
12. राजस्थान की पारंपरिक शिल्प परंपरारू एक सामाजिक अध्ययन – पीएच.डी. शोध प्रबंध, जोधपुर विश्वविद्यालय

शोध पत्र

13. 'राजस्थान में शिल्प परंपरा का सामाजिक आयाम' – 'इतिहास दृष्टि' शोध पत्रिका
14. ष्बीकानेर की स्थापत्य कला और कारीगर समुदायों का योगदानष – 'जन संस्कृति शोध' पत्रिका

❖◆❖